5 प्रलेखन प्रारूप

क्रियाकलाप 5.1

प्रक्रिया का प्रलेखन

कक्षा–11

समय–एक कालांश

निम्नलिखित अनुच्छेदों को पढ़ें और रावण का पुतला बनाने की क्रमवार प्रक्रिया अगले पृष्ठ पर दिए गए प्रारूप में दर्ज करें। अन्य पारंपरिक शिल्प-कला बनाने के लिए भी आप इस प्रारूप का प्रयोग कर सकते हैं।

रावण का पुतला बनाना

दशहरे से पहले के दिनों में उत्तर भारत के अनेक गाँवों तथा शहरों में रावण, उसके भाई कुंभकर्ण और पुत्र मेघनाद के लंबे, भव्य पुतलों का निर्माण होता है। भारत के अनेक शिल्पकारों के लिए इन विशाल आकृतियों का निर्माण उनकी आजीविका अर्जित करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। दिल्ली में, प्रति वर्ष अक्तूबर के माह में, भारत के भिन्न-भिन्न भागों से ऐसे हज़ारों कारीगर इन विशाल आकृतियों को बनाने और बेचने के लिए आते हैं। इन कारीगरों को रावण के भिन्न-भिन्न अंग बनाने में विशेषज्ञता प्राप्त होती है। कुछ ढाँचा खड़ा करने में कुशल होते हैं, कुछ मूँछें बनाने में प्रवीण होते हैं और कुछ बढ़िया पेंटर होते हैं।

पुतला बनाने की प्रक्रिया बाँस की खपचियों को जोड़ कर ढाँचा खड़ा करने से शुरू होती है। बाँस के ढाँचे को कागज़ की दो परतों में लपेटने के बाद, उस पर विभिन्न रंगों से पेंट कर उसे सजाया जाता है। पुतले के भीतर बहुत से पटाखे भर दिए जाते हैं। उद्देश्य यह होता है कि असुर-नरेश को यथा संभव भयानक दिखाया जाए।

पुतले के लिए रावण के दस मुख बनाने की क्रमवार प्रक्रिया ज्ञात करें।

© NCERT not to be republished

शिल्प की प्रक्रिया का प्रलेखन

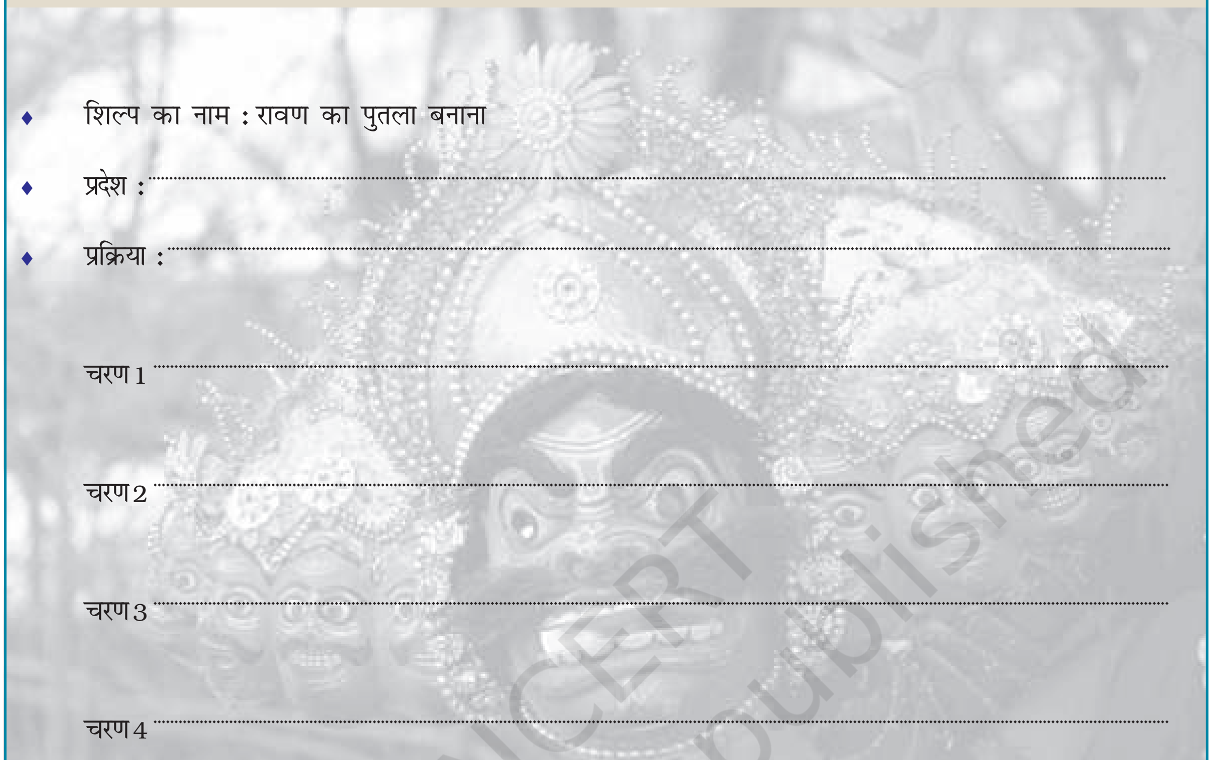

- शिल्प का नाम : रावण का पुतला बनाना
- प्रदेश : ....
- प्रक्रिया : ....

चरण 1 ....

चरण 2 ....

चरण 3 ....

चरण 4 ....

चरण 5 ....

- प्रयुक्त सामग्री : ....
- पुतले का आकार : ....
- एक साथ काम करने वाले शिल्पकारों की संख्या : ....
- पुतला बनाने के लिए अपेक्षित भिन्न-भिन्न शिल्प-कौशल : ....
- यह शिल्प किस उत्सव के साथ संबंधित है : ....

नाम : .... कक्षा : ....

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 5.2

शिल्प परंपराओं का प्रलेखन

कक्षा–11
समय–एक कालांश या गृहकार्य

नीचे दिए गए दो अनुच्छेदों को पढ़िए और ज्ञात कीजिए कि आप उनमें वर्णित शिल्पों तथा उनके निर्माताओं के बारे में क्या सीख सकते हैं। अभ्यास के तौर पर निम्नलिखित अनुच्छेदों में दी गई जानकारी का प्रयोग करते हुए प्रलेखन-प्रपत्र (पृष्ठ 55) भरिए।

दुर्गा की मूर्ति बनाना

...युवा मूर्तिकार 'खोकेन चित्राकर' कोलकाता के निकट मिदनापुर का रहने वाला है। वह मूर्तियाँ बनाने के लिए हर वर्ष विशेष रूप से दिल्ली आता है।

मूर्ति बनाने की प्रक्रिया का वर्णन करते हुए खोकेन कहता है, "सबसे पहले लकड़ी या बाँस की मदद से मूर्ति का ढाँचा बनाया जाता है। यह ढाँचा ही मूर्ति को सीधा खड़ा रखता है। ढाँचा बनाने के बाद उसमें भूसा भर कर उसे एक पतली रस्सी से बाँध देते हैं। अगले चरण में भूसे से भरे हुए ढाँचे को गीली व चिकनी मिट्टी (पंक) से भर देते हैं। पहली परत अपेक्षाकृत गाढ़े गुँथे हुए पंक से की जाती है ताकि मूर्ति को एक निश्चित आकृति मिल जाए। इससे मूर्ति का आधार बनता है। जब यह सूख जाता है तब फिर पंक के साथ अगली परत चढ़ाई जाती है, किंतु यह परत पहली परत जितनी गाढ़ी नहीं होती है। मूर्ति के सूखने की प्रक्रिया के दौरान ही इसे हाथ से तराश कर आकृति दी जाती है। पंक से लदे इस ढाँचे को सूखने में लगभग दस दिन लगते हैं। सूखने के पश्चात्, मूर्ति पर कलाकार अपने विवेक से विभिन्न रंगों से पेंट करता है तत्पश्चात् मूर्ति को आभूषणों, वस्त्रों तथा केशों से सजाया जाता है। देवी दुर्गा की एक मूर्ति बनाने में लगभग पंद्रह दिन लग जाते हैं।"

काम में सहायता के लिए खोकेन एक सहायक रख लेता है, और जब काम ज़्यादा हो तो उसकी पत्नी भी उसकी मदद करती है। खोकेन के बच्चे भी इसमें रुचि लेने लगे हैं, परंतु वह उन्हें ज़्यादा उलझने नहीं देता क्योंकि उसे डर है कि मूर्तियों के प्रति उनकी लगन से उनकी पढ़ाई पर विपरीत असर पड़ेगा।

© NCERT not to be republished

विसर्जन का उत्सव दुर्गा पूजा के अंत में होता है जब मूर्ति यमुना नदी के पवित्र जल में प्रवाहित कर दी जाती है। इसके साथ ही मूर्तिकार के काम की इतिश्री हो जाती है और वह अगले काम के लिए तैयारी शुरू कर देता है।

सुझाए गए क्रियाकलाप

पीछे दिए गए दो उदाहरणों में आपने देखा कि किस प्रकार शिल्पकार विभिन्न धार्मिक गतिविधियों से जुड़ जाते हैं। दशहरे के अवसर पर रावण, कुंभकर्ण और मेघनाद के पुतले बनाना उतना ही श्रम-साध्य कार्य है जितना कि देवी दुर्गा की प्रतिमा बनाना।

पता लगाएँ–

- *आपके शहर के किस स्थान पर दशहरा और दुर्गापूजा के अवसर पर क्रमशः पुतलों और प्रतिमाओं का निर्माण होता है।*
- *वे कौन लोग हैं, जो इन पुतलों और प्रतिमाओं का निर्माण करते हैं?*
- *वर्ष के शेष समय वे क्या कार्य करते हैं?*
- *वे कितने पुतले/प्रतिमाएँ बनाते हैं?*
- *शिल्पकार को इस कार्य का भुगतान किस प्रकार किया जाता है?*
- *क्या वे ये कार्य केवल समाज-सेवा के तौर पर निःशुल्क करते हैं या उन्हें इसके लिए धनराशि अथवा किसी अन्य रूप में भुगतान प्राप्त होता है?*
- इन अस्थायी कलाकृतियों को बनाने की विभिन्न प्रक्रियाएँ कौन-सी हैं?

राजस्थान की चित्रकारी परंपरा

मेवाड़ प्रदेश में स्थित, नाथद्वारा न केवल चित्रकारी तथा दृश्य-कला संस्कृति की अपनी परंपरा के लिए प्रसिद्ध है बल्कि वल्लभाचार्य द्वारा स्थापित पुष्टिमार्ग संप्रदाय का केंद्र भी है। 'पुष्टिमार्गी वैष्णव धर्म' भक्ति के साथ-साथ सेवा पर बहुत ज़ोर देता है। श्री नाथजी (नाथद्वारा में कृष्ण को इसी नाम से जाना जाता है) के प्रेम और कृपा से भरपूर सेवा का विस्तृत अनुष्ठान कविता, संगीत, पाक-कला, पोशाक बनाने, अलंकरण तथा सजावट के शिल्पों, और चित्रकारी के माध्यम से किया जाता है।

नाथद्वारा में कलाकारों के दो समूह रहते हैं। आदि गौड़ मुख्य मंदिर के पीछे 'चितेरों की गली' में या मंदिर परिसर के इर्द-गिर्द बाज़ार - स्थलों में रहते हैं, जबकि नाथद्वारा में बाद में आने वाला जांगिड़ दल नई हवेली में रहता है जिसे 'चित्रकारों का मुहल्ला' भी कहते हैं।

सोनी जाति के लोग पारंपरिक रूप से सुनार होते हैं, किंतु अब वे भी चित्रकारी करने लगे हैं; वस्तुत: संपूर्ण चित्रकार समुदाय मिस्त्री, बढ़ई आदि हैं जबकि स्वयं के ब्राह्मण होने का दावा करते हैं। ये कर्मकार संरचना का काम करते हैं यथा फर्नीचर में कुशन लगाना, चित्रों का उत्कीर्णन, चाँदी का काम, मीनाकारी तथा पेंटिंग आदि। ये सभी व्यवसाय वैकल्पिक रहते हैं, कई बार दोहरे भी और कर्मकार की निजी प्रतिभा, सुविधाओं तथा बाज़ार की प्रचलित माँग पर निर्भर करते हैं।

नई हवेली में हर घर एक पेंटिंग स्टूडियो, रजतकारी या मीनाकारी (इनेमलिंग) की कार्यशाला है। अधिकांश कलाकार अपना व्यवसाय सीधा अपने घरों से करते हैं, या बिक्री, कमीशन के माध्यम से अथवा व्यापारियों के माध्यम से करते हैं जो उनके उत्पाद को जयपुर, दिल्ली या मुंबई ले जाते हैं। प्रतिष्ठित कलाकार अब अधिकतर कमीशन पर काम करते हैं और उनके स्टूडियो में दिखाने के लिए कुछ खास नहीं होता। नई हवेली एक पारिवारिक गढ़ जैसी है जहाँ कलाकार रहते हैं और काम करते हैं। वे जीवन, व्यवसाय और व्यापार के रहस्यों को आपस में बाँटते हैं। अनिच्छापूर्वक भी वे सभी परस्पर संबंधित हैं और जिनके बेटे नहीं होते हैं वे भतीजे को गोद ले सकते हैं क्योंकि पिता से विरासत पुत्र वारिस को ही मिलती है।

पिछवाई-चित्रकारी पुष्टिमार्ग संप्रदाय का एक अनन्य रूप तथा अवधारणा है। पिछवाई का शाब्दिक अर्थ एक बड़ा कपड़ा होता है जो देवता के पीछे की भित्ति पर सजावटी पट का काम करता है। पिछवाई पर कशीदाकारी, छपाई, बुनाई, क्विल्टिंग, गोटाकारी या रंगों के साथ चित्रकारी भी की जा सकती है। इन पिछवाई कलाकृतियों में कलाकारों द्वारा श्री नाथजी को सजाने और सँवारने की तीव्र उत्कंठा होती है, जिसमें श्री नाथजी का लावण्य और पुष्टि भी व्याप्त हो जाए। इसका एक अन्य नाटकीय पहलू भी है जिसमें हवेली के सामंतवादी अनुष्ठानों के बीच देवता भी विराजमान होते हैं। पिछवाई की चित्रकारी के अन्तर्गत मेवाड़ और आस-पास के प्रदेशों की विशिष्ट चित्रकला शैली के दर्शन होते हैं।

पिछवाई का आकार तीन मीटर ऊँचे तथा चौड़े तक या इससे भी अधिक हो सकता है। पिछवाई वर्गाकार हो या आयताकार उसके मध्य भाग में ही श्री नाथजी अंकित किए जाते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में पुष्टिमार्ग, व्यावसायिक चित्रकारी और सामंतवादी राजपूत प्रश्रय के बीच त्रिपक्षीय परस्पर संबंध विकसित हुआ। वह महान पिछवाई चित्रकारी का ज़माना था। इन्हें अब संग्रहालयों और कुछ निजी संग्रहों में ही देखा जा सकता है।

इसी बीच पुष्टिमार्ग के अनुयायियों के प्राश्रयजनित एक अन्य समृद्ध व्यापारी समुदाय विकसित हुआ जिसने इस परंपरा को हम तक पहुँचाया। श्री नाथजी के मंदिर की सामंतशाही संरचना तो यथावत् है, परंतु उसकी व्यय शक्ति को निरंतर नाथद्वारा आने वाले धनवान श्रद्धालुओं की इच्छा ने सशक्त बना दिया है। यहाँ से हवेली, बाज़ार और कलाकार समुदाय के स्टूडियो – घरों में धन का प्रवाह इन्हीं के द्वारा संभव होता है।

© NCERT not to be republished

पिछवाई, राजस्थान

नाथद्वारा की चित्रकारी मात्र धार्मिक नहीं है। इसकी शिल्पशालाओं में हर प्रकार के विषयों तथा शैलियों की चित्रकारी का आवागमन हो चुका है। नाथद्वारा की भू-दृश्य चित्रकारी, चित्रकला की बहुत लोकप्रिय शैली थी जिसमें हरे-भरे वृक्षों और बेल-बूटों की भरमार हुआ करती थी। इस प्रकार के चित्रों को आगंतुकों को सस्ते स्मृति-चिह्नों के रूप में बेचा जाता था।

गत कुछ वर्षों में यहाँ पर पारंपरिक राजपूत शैलियों और मुग़लों के अंतिम चरण की शैलियों का पुनर्जागरण होता दिखाई देता है। इस पुनर्जागरण के कुछ असाधारण पहलू हैं। यहाँ पर की जाने वाली परंपरागत चित्रकारी में और किसी विशिष्ट ऐतिहासिक काल के किसी विशिष्ट प्रदेश की चित्रकारी के पुनरुत्पादन को और संग्रहालयों तथा निजी क्रेताओं द्वारा उसकी की जाने वाली खरीद को भिन्न नहीं माना जा सकता है।

नाथद्वारा के पेंटर उत्कृष्ट कौशल से युक्त पांडुलिपि चित्रकारी का पुनरुत्पादन, कला इतिहास जागरूकता के साथ करते हैं। पहले, पुनरुत्पादन उन चित्रों से किया जाता था जो उन्होंने देखे हों, या तो उनके पास मरम्मत के लिए लाए गए हों या पारिवारिक ट्रंकों से उपलब्ध हुए हों। अत: नकल की गई शैलियाँ मेवाड़ के निकट प्रदेशों की शैलियों की ही होती थीं। परंतु अब, पुनरुत्पादित चित्रों की वृद्धि के साथ-साथ, नाथद्वारा के कलाकार अपने चित्रों में अपनायी गई अनेक शैलियों के उद्‌गम तथा उनके काल के संबंध में भरोसे के साथ बात करते हैं। फिर भी यह मानना होगा कि इन चित्रों में मौलिकता के प्रयास अधिक नहीं किए गए। वे आकृति तथा चेहरे के प्रकारों, चेष्टाओं, मुद्राओं तथा भूदृश्यों का मिश्रण बन गए थे जो परिचित और पहले से ही विदित थे।

–नीलिमा शेख

प्रलेखन प्रपत्र को सही-सही और संक्षेप में (अगले पृष्ठ पर) भरिए।

शिल्प का प्रलेखन

- शिल्पकार का नाम और व्यवसाय ....
- पता ....

शिल्प के बारे में

- शिल्प का नाम ....
- स्थानीय संदर्भ और कार्य ....
- क्या यह किसी विशेष अवसर पर बनाया जाने वाला शिल्प है? ....
- इस प्रक्रिया में कितना समय लगता है? ....
- शिल्प-निर्माण की प्रक्रिया ....

  चरण 1 ....

  चरण 2 ....

  चरण 3 ....

  चरण 4 ....

  चरण 5 ....

  चरण 6 ....

  चरण 7 ....

  चरण 8 ....

  चरण 9 ....

  चरण 10 ....
- कौन-सी सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है? ....
- कितने प्रकार के शिल्पकार लगाए जाते हैं? ....
- किन औज़ारों का प्रयोग किया जाता है? ....
- शिल्प की उपयोगिता ....

  ....
- शिल्प को उपयोगी बनाने के लिए इसका डिज़ाइन कैसे तैयार किया जाता है?
- इस शिल्प से जुड़ी हुई मौखिक परंपराओं, कल्पनाओं और दंत कथाओं का वर्णन करिए–

  ....

  ....
- शिल्प के प्राश्रय का बदलता हुआ स्वरूप ....
- समुदाय अपना व्यवसाय क्यों और कैसे बदलते हैं? ....
- शिल्प ने बाज़ार की बदलती हुई ज़रूरतों के साथ कैसे रूपांतरण किया है? ....

नाम : .... कक्षा : ....

© NCERT not to be republished

बातिक-कार्य

लघु कार्य के लिए सुझाया गया विषय

पुस्तकालय, इंटरनेट से या किसी कलाकार से भेंटवार्ता करके बातिक कार्य की प्रक्रिया ज्ञात कीजिए।

नीचे चित्रों में श्रीलंका की महिलाओं को बातिक बनाते हुए दिखाया गया है। बातिक नाथ की प्रक्रिया के प्रत्येक चरण और उनके द्वारा प्रयुक्त की गई सामग्री तथा उपकरण के लिए शीर्षक लिखिए।

बातिक, श्रीलंका

1. ____________________

2. ____________________

3. ____________________

4. ____________________

5. ______________________

6. ______________________

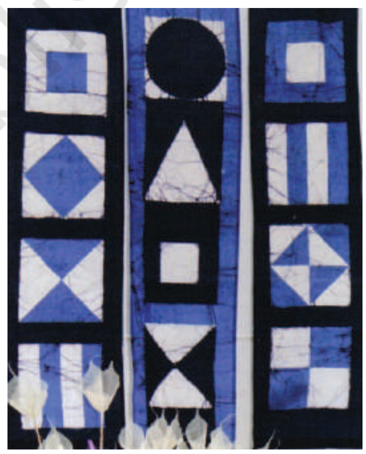

7. ______________________

not to be republished

क्रियाकलाप 5.3

शिल्पकारों की शिल्पकला का महत्त्व

कक्षा–12

समय–एक कालांश या गृहकार्य

निम्नलिखित अनुच्छेदों में दी गई जानकारी का प्रयोग करके उन प्रश्नों की एक सूची बनाइए जो आप राजस्थान के फड़ चित्रकार से भेंटवार्ता में पूछेंगे।

भारत में कथा वाचन की कला में संगीत, नाटक, नृत्य, चित्रकारी, शिल्प आदि सभी कलाओं का सम्मिश्रण पाया जाता है। उदाहरणत: किसी चित्रित फड़ के सामने भोपा (राजस्थान की एक विशेष जाति) 'पाबूजी की फड़' बाचता है। इन विशाल कुंडलित फर्शों पर मूँछ वाले पुरुष की प्रमुख आकृति पाबूजी की होती है और भोपा-भोपी हमें राजस्थानी वीर, पाबूजी की कथा सुनाते हैं। पाबूजी से आकार में कुछ छोटे उनके चार साथी उनके सामने बैठी हुई मुद्रा में चित्रित किए जाते हैं। उनकी प्रसिद्ध घोड़ी काली केसरी का महत्वपूर्ण स्थान बैठे हुए योद्धाओं के नीचे दिखाया गया है। प्रत्येक फड़ सामान्यतया बहुत बड़ी होती है, कुछ विशेष रूप से अठारह फुट लंबी और साढ़े तीन फुट चौड़ी तक भी हो सकती है। इस फड़ की पृष्ठभूमि के आगे राजस्थानी कथा वाचक भोपा और उसकी पत्नी (भोपी) युगों पुरानी वीर गाथाएँ गा-बजाकर सुनाते हैं। पाबूजी की यह कहानी तर्कसंगत क्रम में चित्रित न होकर फड़ में इधर-उधर बिखरी होती है। एक फड़ पचास से अधिक वर्ष तक चलती है। इसे चित्रित करने के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले प्राकृतिक रंगों पर ग्रीष्मऋतु की गर्मी, मानसून की आर्द्रता और शीतकाल की सर्दी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

पाबूजी की फड़, राजस्थान

© NCERT not to be republished

अनुष्ठान और कथावाचन का गहरा संबंध है यह फड़-निर्माण की प्रक्रिया से स्पष्ट हो जाता है। एक नया फड़ बनवाने के लिए भोपा भीलवाड़ा जाता है किंतु जाने से पूर्व वह अपने पुराने फड़ को कोलू मंडल के मंदिर (जिसे पाबूजी का जन्म स्थान माना जाता है) में छोड़ देता है। या उसे विधिपूर्वक पुष्कर झील में विसर्जित कर देता है। जब फड़ पर चित्रकारी की जा रही हो, तब भोपा कई दिन चित्रकार के साथ बिताता है। नए फड़ से होने वाली आय उसे किसी मंदिर में पाबूजी को भेंट करनी होती है।

पाबूजी की संपूर्ण कथा कभी भी एक साथ या एक बार में नहीं गायी जाती है। इस गीत के विभिन्न अंग अनुष्ठान के अलग-अलग अवसरों पर गाए जाते हैं। जब भोपा रावणहत्था को बजाता है और कथा को गाता है, तब उसकी पत्नी फड़ पर विशेष घटना-क्रम को उजागर करने के लिए एक लालटेन लेकर घूमती है। लालटेन की टिमटिमाती रोशनी से गाढ़े रंगों में पेंट की हुई आकृतियाँ सजीव हो उठती हैं। उसके साथ होती है भोपा के मधुर कंठ से निकलती हुई गाने की धुन और श्रोताओं की श्रद्धा जो उस कथा को कई बार सुन चुके होते हैं। भोपा जिस रावणहत्थे को बजाता है वह राजस्थान का सर्वाधिक लोकप्रिय तन्तु-वाद्य है। कहा जाता है कि लंका के राजा रावण ने इसे अपने हाथों से बनाया था, अतः इसका यह नाम रावणहत्था पड़ा। इसे सारंगी का पूर्व रूप भी माना जाता है। यह नारियल के आधे खोल पर मढ़ी झिल्ली और बाँस की एक छड़ी तथा धातु के तार से बनता है। इसे एक गज से बजाया जाता है, जिस पर घंटियाँ लगी होती हैं।

–*फ़ैज़ल अलकाज़ी* और *प्रीति जैन*, जयपुर की खोज

अभ्यास

1. उपर्युक्त अनुच्छेदों को पढ़िए और निम्नलिखित के बारे में एक प्रश्नावली बनाइए–
    - शिल्प
    - प्रस्तुति
    - इसके साथ जुड़ी हुई रस्में
    - प्रस्तुति में प्रयुक्त संगीत और वाद्य
    - शिल्पकार और उसका परिवार

रावणहत्था

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 5.4

शिल्प की अवधारणा की समझ

कक्षा–12
समय–एक कालांश या गृहकार्य

'शिल्प' का अर्थ वे विशिष्ट गतिविधियाँ हैं जो मुख्यत: साधारण औज़ारों और हस्तकौशल, साथ ही शिल्प-प्रक्रियाओं के स्थानीय और पारंपरिक उपयोग से विशिष्ट द्रव्यों को उत्पादों में परिवर्तित करने से संबंधित होती हैं। गतिविधियाँ प्राय: 'शिल्पकार' कहलाने वाले लोगों के आर्थिक क्रियाकलाप का मूल होती हैं।

भारत में पीढ़ियों से अपनाए जा रहे पारंपरिक शिल्पों का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसमें परंपरा, मूल्य तथा संस्कृति के सूत्र परस्पर अभिन्न रूप से गुँथे हुए हैं। भारत के ये विभिन्न कला-रूप, मोटिफ तथा शिल्पकारिता के सजीव रूप हैं जो हमारी पारंपरिक विरासत की पैतृक धरोहर और भण्डार हैं। पारंपरिक शिल्प की समझ, लोक-साहित्य, लोक-भाषा तथा संवेदनशीलता किसी भी शिल्प के महत्वपूर्ण घटक होते हैं। शिल्प के अंतर्गत प्रयुक्त सामग्री से प्राप्त रूपों, बनावटों, रंगों, तकनीकों में संस्कृति का मूर्त रूप दिखाई देता है। इनमें से प्रत्येक विशिष्ट प्रादेशिक लक्षणों युक्त शिल्प कला दीर्घ अवधि के दौरान विकसित हुई है जिनकी पहचान विशिष्ट शैलियों और प्रयुक्त तकनीकों द्वारा की जा सकती है। पारंपरिक शिल्प उत्पादों में उपयोगिता के साथ-साथ सौंदर्य और रचनात्मकता भी उनका अभिन्न अंग होते हैं।

क्रियाकलाप

1. इस अध्याय में दिए गए उद्धरणों से शिल्प-कला की पाँच अलग-अलग परिभाषाएँ खोजिए। उस सूची में अपनी परिभाषा भी जोड़िए।
2. (i) सजीव भारतीय शिल्प परंपराओं के जटिल अनुशासन को समझते समय जिन पहलुओं पर विचार करने की ज़रूरत होती है, उनकी सूची बनाएँ – यथा, शिल्प का इतिहास।
   (ii) क्या आप इस सूची को प्राथमिकता के क्रम में व्यवस्थित कर सकते हैं?
3. उन शिल्प उत्पादों की सूची बनाइए जो एक ही द्रव्य (मटीरियल) से बनी हों यथा पत्थर, कागज़ या धातु आदि। निम्नलिखित उदाहरण देखिए–

मृदा

- पौधों के लिए पात्र/भंडारण
- खिलौने
- दीवाली के दीये
- धार्मिक लघु मूर्तियाँ

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 5.5

बाल श्रम और हस्तशिल्प

कक्षा–12
समय–आवंटित कार्य

प्रशिक्षण की युगों प्राचीन पद्धति को भली–भाँति सुनियोजित करके, शोषण युक्त प्रणाली के बजाय शिक्षा के वैकल्पिक साधन के रूप में विकसित किया जा सकता है। बच्चों के शिल्प सीखने पर पूर्णतः रोक लगाने का अर्थ भविष्य में भारी कमाई करने में समर्थ एक कार्य–कुशल वर्ग को खो देना है। इसका आशय ऐसे भारत जैसे देश में स्वरोज़गार पैदा करने के अवसरों की हानि भी होगी जहाँ बेरोज़गारी बढ़ रही है और ग्रामीण युवाओं, विशेषकर घर पर रहने वाली महिलाओं के लिए रोज़गार के अवसर बहुत कम हैं। हालाँकि, पंद्रह वर्ष से कम आयु के हर बच्चे को स्कूल जाना चाहिए तो भी घर पर रहते हुए वह अपना पारिवारिक शिल्प सीख सकता है।

दुर्भाग्यवश, भारत में शिल्प क्षेत्र में प्रायः होता यह है कि शिल्पकार का बच्चा या तो निरक्षर रह कर पैतृक कौशल सीखे और इस प्रकार परिवार की आय में योगदान करें या अपने परंपरागत शिल्प को छोड़कर स्कूली शिक्षा प्राप्त करें। हो सकता है कि स्कूल की औपचारिक शिक्षा उसे भविष्य में कोई भी काम कर सकने के योग्य न बनाए। रणथंभौर में, गाँव के स्कूल का अध्यापक केवल दैनिक हाज़री रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने के लिए ड्यूटी पर आता है और फिर पर्यटक पथ प्रदर्शक के रूप में कार्य करने के लिए जंगल में चला जाता है।

मृत्तिका का काम सीख रहे बच्चे

बाल श्रम के संदर्भ में मूल मुद्दा गरीबी नहीं है जो प्रायः उसके औचित्य के रूप में बताई जाती है। विचारणीय यह है कि क्या बच्चे के लिए वैकल्पिक शैक्षिक अवसर उपलब्ध हैं जो उसे वही रोज़गार अवसर उपलब्ध करा सकें। क्या कानून, अभिनव नव आयोजन तथा शैक्षिक–तंत्रों द्वारा शिक्षा को प्रशिक्षण और सशक्तीकरण के एक नए रूप में परिवर्तित किया जा सकता है?

शिल्प–कौशल में प्रशिक्षण, चाहे वह घर पर हो अथवा पारंपरिक गुरु–शिष्य परंपरा द्वारा प्राप्त किया जाए, उसे औद्योगिक प्रशिक्षण जैसी मान्यता मिलनी चाहिए। उन्हें भी वही समर्थन दिया जाना चाहिए जो तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के अन्य औपचारिक स्वरूपों को दिया जाता है। प्रशिक्षण देने वाले परिवार, मास्टर शिल्पकार, सहकारी संगठन, संस्था, गैर–सरकारी संगठन को कुछ आर्थिक सहायता मिलनी चाहिए ताकि

प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे बच्चे को वह राशि दी जा सके न कि उनके नियोक्ता (एम्प्लॉयर) को। अन्यथा प्रलोभन के वशीभूत होकर, बच्चों को कौशल सिखाने के बहाने उनसे बंधुआ मज़दूरी कराई जा सकती है- जैसा उत्तर प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश में पीतल उद्योग, पारिवारिक व्यवसाय से हटकर एक थोक-निर्माण गतिविधि (असेंबली लाइन) बन गया है। कालीन उद्योग, भी ऐसा ही एक अन्य उदाहरण है। यद्यपि अंतर्राष्ट्रीय दबाव और कानून ने स्थिति में कुछ सुधार किए हैं। उदाहरणतः एगमार्क, स्माइलिंग कार्पेट अभियान, संकल्पना या अनुप्रयोग की दृष्टि से संपूर्ण न होते हुए भी आगे की रणनीतियाँ विकसित करने के लिए एक ऐसा मॉड्यूल बन गया।

स्कूल में शिल्प कौशल सीखने और किसी कुशल शिल्पकार के साथ काम करने में क्या अंतर है?

शिल्प-कौशल को व्यावसायिक प्रशिक्षण के अन्य स्वरूपों के बराबर दर्जा दिया जाना चाहिए, विशेषतः पारंपरिक शिल्प पॉकेटों में। इनमें विधिवत् संरचित पाठ्यचर्या अवश्य होनी चाहिए। प्रशिक्षकों या माता-पिता को कौशल सिखाने के लिए भुगतान किया जाना चाहिए ताकि बच्चों का प्रयोग बेगार श्रमिकों के रूप में न हो पाए। पारंपरिक शिक्षा के लिए सुविधाएँ उपलब्ध कराने के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि पारंपरिक कौशल सीखने और शिल्प-उत्पादन के कार्य संरचनाओं के अनुसार समय और सत्र तय किया जाए। अधिकांश युवा शिल्पकार स्कूल नहीं जाते क्योंकि स्कूल का समय तथा स्थान उसके पारिवारिक शिल्प-कार्य को असंभव बना देते हैं। अधिकतर शिल्प-उत्पादन प्रायः एक मौसमी धंधा होता है और बाज़ार की माँग के अनुसार घटता-बढ़ता रहता है। स्कूल के सत्रों तथा पाठ्यचर्या को तदनुसार व्यवस्थित किया जाना चाहिए। भारत जैसे विविधतापूर्ण और बहुआयामी देश में कोई अकेला समाधान या क्रियाविधि नहीं हो सकती और हमें शिल्पी-परिवारों के बच्चों के लिए ऐसे समाधान ढूँढ़ने की ज़रूरत है कि वे शिल्प कार्य भी सीख सकें और स्कूल भी जा सकें।

पतंग बनाना सीखते हुए स्कूली बच्चे

© NCERT not to be republished

क्रियाकलाप 5.6

शिल्पी समुदायों के बच्चे

कक्षा–12

समय–क्षेत्र-अध्ययन

शिल्पकर्मियों के बच्चे कार्यशाला के वातावरण में पलते हैं। सजीव परंपरा से प्रभावित, वे अनजाने ही रूपों, प्रतीकों और तकनीकों से परिचित हो जाते हैं। ज्ञान का संचरण माता/पिता से बच्चे को और मास्टर शिल्पकार से शिक्षु को होता है। शिल्पकार एक डिज़ाइनर के साथ-साथ शिक्षक भी होता है...

–*पुपुल जयकर*, दि अर्दन ड्रम

अभ्यास

ऊपर दिए गए अनुच्छेद को पढ़िए और जानिए कि शिल्पी समुदाय में पलने वाला बच्चा अन्य बच्चों से कैसे भिन्न होता है। शिल्पी समुदाय के एक बच्चे के जीवन का प्रलेखन करें और निम्नलिखित संकेतों के आधार पर उसकी कहानी लिखें–

- बच्चे ने किस आयु में शिल्प सीखना शुरू किया था?
- शिल्प-निर्माण प्रक्रिया के कौन-से पहलू उसने सर्वप्रथम सीखे?
- बच्चा और क्या करता है–घर का काम, विपणन आदि?
- वह कौन-से खेल खेलता है?
- बड़ा होने पर बच्चा क्या करना चाहेगा?
- क्या वह स्कूल जाता है?
- बच्चे को सबसे अधिक आनंद क्या करने में आता है?

© NCERT not to be republished

भाग II

क्षेत्र–अध्ययन

दीर्घ कार्य